Chapter-1

अध्याय-१

विषय प्रवेश

अध्याय-१

विषय प्रवेश

प्रास्ताविक :

हिन्दी साहित्य का आधुनिक काल अनेक नयी साहित्य विधाओं का उद्‌भव स्थान है। हिन्दी साहित्य में ही नहीं बल्कि समूचे भारतीय साहित्य में, इतनी साहित्यिक विधाएँ पहले कभी नहीं थी। संस्कृत का गद्य समुन्नत था परंतु लगभग तमाम भारतीय आधुनिक भाषाओं में गद्य का आविर्भाव आधुनिक काल में ही हुआ है। यदि हिन्दी की बात करें तो आदिकाल में 'राउलवेल', 'उक्ति व्यक्ति प्रकरण', 'वर्णरत्नाकर' जैसी कुछेक गद्य रचनाएँ मिलती है। उसके बाद मध्यकाल में 'चौरासी वैष्णवन की वार्ता', 'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता', 'भक्तमाल की टीका', 'भाषायोगवशिष्ठ' जैसी उँगली पर गिनी जा सके ऐसी कुछेक गद्य रचनाएँ मिलती हैं। वस्तुतः गद्य अजस्र प्रवाह तो आधुनिक काल में ही हुआ। अंग्रेजी शिक्षा के प्रभाव स्वरूप भारतीय लेखकों का परिचय

अंग्रेजी के समुन्नत गद्य से हुआ और उसके प्रेरणा स्वरूप भारतीय लेखकों ने अपनी-अपनी भाषाओं में गद्य लेखन शुरू किया। इस प्रकार हिन्दी में आधुनिक काल के अन्तर्गत हिन्दी गद्य का आविर्भाव लल्लूलाल गुजराती, मुन्शी सदा सुखलाल , पंडित सदलमिश्र और मुन्शी इंशा अल्ला खाँ के द्वारा हुआ। इन चार लेखकों को हम आधुनिक हिन्दी गद्य भवन के चार स्तंभ कह सकते हैं। उनके पश्चात् राजालक्ष्मणसिंह तथा राजा शिवप्रसाद हिंद ने गद्य की इस यात्रा को और आगे बढ़ाया। उसके पश्चात् भारतेन्दु तथा भारतेन्दु मंडल के लेखक आए जिन्होंने अलग-अलग विधाओं में साहित्य की रचना करके गद्य को विकसित और समृद्ध करने का कार्य किया। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने हिन्दी गद्य को व्यवस्थित व्याकरण सम्मत और परिमार्जित करने का कार्य किया। उसके बाद तो आधुनिक काल के कथासाहित्य के वे तमाम लेखक आते हैं जिनके कारण हिन्दी गद्य अधिकाधिक सशक्त एवं प्राणवान होता गया है। कहना न होगा कि कथा साहित्य का विकास गद्य के विकास के साथ ही होता है । हिन्दी में भी जब गद्य का विकास आधुनिक काल में हुआ उसके पश्चात ही कथा-साहित्य का विकास हुआ है । यह एक सर्वविदित तथ्य है । कथा साहित्य के अन्तर्गत उपन्यास और कहानी का समावेश होता है। उपन्यास इस नये युग की एक सर्वाधिक नयी विधा है । हिन्दी साहित्य के नवजागरण काल में ब्रह्मोसमाज, प्रार्थनासमाज, आर्यसमाज , थियोसोफिकल सोसायटी, जैसी सामाजिक,धार्मिक संस्थाओं के कारण तथा भारतीय स्वाधीनता -संग्राम के कारण समाज ने जब नयी करवट ली तो अनेक नये सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, राष्ट्रीय, सांस्कृतिक, शैक्षणिक मुद्दे सामने आये जिनको यथार्थतः आकलित करने का कार्य उपन्यास और कहानी ने किया है। हिन्दी के कथा साहित्य को पूर्व-प्रेमचंदकाल, प्रेमचंदकाल, प्रेमचंदोत्तरकाल, स्वातंत्र्योत्तर काल, साठोत्तरकाल तथा समकालीन जैसे तबक्कों में हम विभक्त कर सकते हैं। हमारी आलोच्य लेखिका श्रीमती मन्नूभंडारी इनमें से स्वातंत्र्योत्तरकालीन, साठोत्तरी एवं समकालीन लेखक-लेखिकाओं की पंक्ति में आती हैं। यह भी

एक सुखद संयोग है कि आधुनिक काल के अन्तर्गत हमें सबसे ज्यादा लेखिकाओं का साहित्य उपलब्ध होता है । कृष्णा सोबती, उषा प्रियंवदा तथा मन्नूभंडारी की लेखिकात्रयी अपने सशक्त लेखन कार्य से सुप्रसिद्ध हैं । मन्नूभंडारी की गणना उन लेखिकाओं मे होती है जिन्होंने बहुत कम लिखा है पर जितना लिखा है बहुत सशक्त ढंग से लिखा है । अतः हिन्दी के आधुनिक हस्ताक्षरों में मन्नूजी का एक विशिष्ठ स्थान है ।

कथा साहित्य से तात्पर्य :-

कथा साहित्य की उत्पत्ति सर्वप्रथम कहाँ और किस रूप में हुई, यह आज बता सकना अत्यन्त कठिन है, किन्तु इसका अस्तित्व बहुत पुराना है । कथा सर्वकाल तथा सर्वदेश में विद्यमान थी इतना तो निर्विवाद रूप से सर्वमान्य है । साहित्य के अन्य अंगों की तरह कथा-साहित्य का रुप भी देशकाल तथा परिस्थितियों की विभिन्नता के अनुसार विकसित होता रहा है ।

साहित्य क्या है ? इस प्रश्न पर भी शताब्दियों से विचार होता आ रहा है और इसी प्रश्न के उत्तर में साहित्य की संज्ञा निरूपित करने की अनेकानेक चेष्टाएँ की गई है । राजशेखर ने अपनी 'काव्य मीमांशा ' में साहित्य की व्याख्या इस प्रकार की है -" शब्दार्थयोर्यथावत्सहभावेन विधा साहित्य विधा "[१]

अर्थात् ' शब्द और अर्थ के यथा योग्य सहयोग वाली विधा साहित्य विद्या है ।' कथा साहित्य की सबसे बड़ी विधा उपन्यास साहित्य विधा है ।

उपन्यास शब्द की व्याख्या और परिभाषा :

संस्कृत लक्षण- ग्रंथों में उपन्यास शब्द प्राप्य है, किन्तु जिस विस्तृत अर्थ में आज इस शब्द का प्रयोग हो रहा है, वैसा प्राचीन समय में नहीं । 'नाट्य शास्त्र में वर्णित प्रतिमुख संधि का एक उपभेद है उपन्यास । इस सूत्र की व्याख्या इस प्रकार की है - " उपपत्तिकृतोह्यर्थ : उपन्यास : प्रकीर्तितः ।"[२]

अर्थात् किसी अर्थ को उसके युक्ति युक्त अर्थ में प्रस्तुत करने को ही

उपन्यास कहा जाता है ।

उपन्यासों को 'उपन्यास : प्रसादम्' अर्थात प्रसन्नता देनेवाली कृति को उपन्यास कहते हैं । आज उपन्यास शब्द के अन्तर्गत गद्य द्वारा अभिव्यक्ति संपूर्ण कल्पना प्रसूत कथासाहित्य ग्रहीत किया जाता है । अत: प्राचीन काल के उपन्यास शब्द में तथा आज के उपन्यास शब्द में केवल नाम मात्र की समानता है । मुन्शी प्रेमचन्दजी उपन्यास की परिभाषा इस प्रकार करते हैं -'' मैं उपन्यास को मानव जीवन का चित्र मात्र समझता हूँ । मानव चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्व है ।''[३]

डॉ. श्याम सुन्दरदास उपन्यास की व्याख्या करते हुए लिखते हैं- ''उपन्यास मनुष्य के वास्तविक जीवन की काल्पनिक कथा है ।''[४]

वस्तुत: मानव- जीवन की आन्तरिक और बाह्य परिस्थितियों का मन का संघर्ष, उसके आसपास का वातावरण और समाज का एक काल्पनिक कथा चित्र है । किन्तु काल्पनिक होता हुआ भी वह यथार्थ है । उसमें जीवन के सत्य की अभिव्यक्ति होती है ।

उपन्यास के तत्व :

उपन्यास के निर्माण में विभिन्न तत्व कार्य करते है, जिनका विवेचन संक्षिप्त में करना अत्यंत मुश्किल काम है । सर्व प्रथम उपन्यास में घटनाएँ होती हैं, जो कि उपन्यास के शरीर का निर्माण करती हैं । यही घटनाएँ उपन्यास के जिस अंश में संपादित की जाती है, उन्हें कथावस्तु कहते है । यह कथावस्तु और घटनाएँ मनुष्यों पर आश्रित होती हैं, यही मनुष्य पात्र कहलाते हैं । इन पात्रों की पारस्परिक बात-चीत, वार्तालाप कथोपकथन कहलाता है । पात्रों के आसपास की परिस्थितियाँ, देशकाल आदि का वर्णन वातावरण में किया जाता है । संपूर्ण पात्र तथा कथावस्तु किसी विशिष्ट उद्देश्य या विचार की अभिव्यक्ति करते हैं ; उनका सृजन किसी विशेष आदर्श को लेकर किया जाता है । उपन्यास वर्णन की एक विशिष्ट पद्धति होती है जिसे उपन्यास की शैली कह सकते हैं । इस

प्रकार कथावस्तु, पात्र, कथोपकथन, वातावरण, भाषा-शैली, विचार और उद्देश्य या जीवन दर्शन आदि उपन्यास के छ: तत्व हैं।

उपन्यास के प्रकार :

साधारणत: उपन्यासों का वर्गीकरण वर्ण्य-विषय, उद्देश्य तथा शैली के आधार पर किया जाता है। वर्ण्य विषय के आधार पर उपन्यासों के पौराणिक, सामाजिक, ऐतिहासिक, तिलस्मी, जासूसी, मनोवैज्ञानिक व आँचलिक आदि प्रकार हो सकते हैं। किसी विशिष्ट उद्देश्य को लेकर लिखे गए उपन्यास भी उद्देश्य के अनुरूप ही वर्गीकरण किया जाता है। समाज की किसी समस्या को सुलझाने के उद्देश्य से लिखे गए उपन्यास सामाजिक उपन्यास कहलायेंगे। और मानव-मन की आन्तरिक अनुभूतियों के विश्लेषण के लिए लिखे गए उपन्यास मनोवैज्ञानिक कहे जाते हैं। इस प्रकार मुख्य रूप से उपन्यास को निम्न प्रकारों में बाँट सकते हैं।

१. घटना प्रधान उपन्यास
२. चरित्र प्रधान उपन्यास
३. ऐतिहासिक उपन्यास
४. सामाजिक उपन्यास
५. आँचलिक उपन्यास
६. मनोवैज्ञानिक उपन्यास

कहानी :

कहानी कथासाहित्य की दूसरी महत्व पूर्ण विधा है। कहानी साहित्य में एक स्वतंत्र कला के रूप में विकसित हो चुकी है। लोकप्रियता में तो वह आज साहित्य के अन्य विधाओं की अपेक्षा बहुत अधिक आगे बढ़ी हुई है। कहानी उपन्यास की अनुजा होते हुए भी अपने स्वतंत्र कलात्मक विकास द्वारा साहित्य में विशिष्ट स्थान की अधिकारिणी समझी जाती है।

कहानी की परिभाषा :

कहानी की व्याख्या करते हुए जयशंकर प्रसादजी लिखते हैं "सौन्दर्य की एक झलक का चित्रण करना और उसके द्वारा इसकी सृष्टि करना ही कहानी का लक्ष्य होता है।"

एच.जे.वेल्स लिखते है-"कोई भी मधुर कथात्मक रचना जो सरलता से बीस मिनट में पढ़ी जा सके, कहानी कही जा सकती है।"[६]

कहानी के तत्व :

कथावस्तु कहानी का प्रमुख तत्व है। उसे कहानी का प्राण भी माना जाता है। घटनाओं के समूह को कथानक कहते हैं। इसके अभाव में कहानी की रचना संभव नहीं होती। कहानी का कथानक पुराण, इतिहास, युगीन जीवन तथा कहानीकार की कल्पना पर आधृत होता है। पात्र या चरित्र-चित्रण कहानी का दूसरा प्रमुख तत्व है। पात्रों के माध्यम से ही कथानक गतिशील होता है। पात्र संयोजना के माध्यम से ही कहानीकार मानव चरित्र के बाह्य एवं अंतरलोक की यात्रा करता है। पात्र जीवन से जुड़े हुए होने चाहिए।

पात्रों के आपसी वार्तालाप को कथोपकथन या संवाद कहते है। संवादो की भाषा सरस, सुबोध और पात्रानुकूल होनी चाहिए। वस्तुत: संवाद से कहानी अधिक प्राणवान बनती है। कहानी में स्थान, समय और परिस्थितियों के वर्णन द्वारा वातावरण का निर्माण किया जाता है। कुशल कहानीकार कहानी में देशकाल के वातावरण का चित्रण सहज, स्वभाविक यथार्थ एवं परिस्थितियों के अनुरूप ही निर्मित करता है।

कहानी कहने का माध्यम भाषा ही है। भाषा-शैली कहानी का वह तत्व है जो संपूर्ण कहानी को कलात्मक गरिमा प्रदान करता है। भाषा-शैली के उचित प्रयोग पर ही कहानी जीवन्त बन पाती है। भाषा पात्रानुकूल होनी चाहिए।

किसी भी रचना का उद्देश्य पूर्ण होना अत्यन्त आवश्यक है। कहानी लिखने का भी उद्देश्य होता है। कहानी का उद्देश्य मात्र मनोरंजन कराना ही नहीं

होता बल्कि कहानी मनुष्य को जीवन की सही पहचान कराने का कार्य करती है।

हिन्दी उपन्यास का विकास :

उपन्यास कथा साहित्य की सबसे बड़ी विधा है। कथा को कहना और सुनना यह मनुष्य की स्वभाविक प्रवृत्ति है। यह प्रवृत्ति हमें प्राचीन काल से देखने को मिलती है। कथा-कहानी की परंपरा नयी नहीं है। जिस प्रकार संस्कृत साहित्य में 'पंचतंत्र', ' हितोपदेश', 'बेताब', ' शुक सप्तति', ' कथा सरित्सागर , ' कादम्बरी', हर्ष चरित कथाएँ और नीति प्राचीन यूनानी साहित्य में ईसा से पहले एवं बाद की कथाएँ मिलती है।

आधुनिक उपन्यास का वास्तविक विकास तो यूरोप में सांस्कृतिक जागरण युग में सर्व प्रथम इटली से ही शुरू होता है। सामन्ती प्रथा के ह्रास और नवोत्थित व्यापारी वर्ग की उन्नति का वह युग था।

उपन्यास साहित्य का वह अंग है जो गद्य कथासाहित्य के माध्यम से संपूर्ण चित्र प्रस्तुत करता है। जीवन के अधिकतर पहलू का चित्रण उसमें आ जाता है। डॉ. नन्ददुलारे वाजपेयी भी ऐसा ही मत प्रकट करते हैं -" उपन्यास का जगत खुले आकाश के नीचे फैली हुई विस्तृत हरितिमा के समान है, जिसमें नानावर्ण के वृक्ष, लता, पशु, पक्षी आदि स्वच्छन्द रूप से विहार करते है, यद्यपि इस स्वच्छन्दता में भी एक समग्रता तो रहती है।"[७]

स्वतंत्रता के पूर्व के हिन्दी उपन्यास साहित्य का संक्षिप्त परिचय :

स्वतंत्रता के पूर्व उपन्यास साहित्य की चर्चा करने के लिए तथा अध्ययन की सुविधा के लिए कुछ विशेष कालो में बाँट लेते है।

१. प्रेमचंद पूर्व युग - (सन्-१८८२ से १९१६)

२. प्रेमचंद युग - (सन्-१९१६ से १९३६)

३. प्रेमचंदोत्तर युग- (सन्-१९३६ से १९४७)

प्रेमचंदपूर्व युग :

हिन्दी साहित्य का पहला मौलिक उपन्यास लाला श्रीनिवासदास कृत 'परीक्षा गुरू' जो (सन्-१८८२) हिन्दी का प्रथम उपन्यास माना जाता है। उसके बाद देवकी नंदनखत्री का तिलस्मी और ऐय्यारी कथानक लेकर आना महत्वपूर्ण घटना है क्योंकि 'चन्द्रकान्ता' (सन-१८९०) में लिखा गया था। इसका साहित्य मूल्य भले न रहा हो फिर भी हिन्दी का प्रचार तथा पाठकों की वृद्धि के कारण उसका महत्व है ही। जासूसी व ऐय्यारी उपन्यास 'चन्द्रकान्ता' के पढ़ने के बाद अनेक लोगों ने हिन्दी को पढ़ना शुरू किया। इस कारण कुछ लेखकों ने उसी कोटि के उपन्यास लिखना आरंभ किया। जैसे दुर्गाप्रसाद खत्री, हरिकृष्ण जौहर, देवी प्रसाद शर्मा, जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी, बाल मुकुन्द वर्मा, विश्वेश्वर प्रसाद, रामलाल वर्मा आदि उल्लेखनीय है।

तत्पश्चात् श्री गोपालराम गहमरी और कार्तिक प्रसाद खत्री ने बंगला की छाया पर अनेक उपन्यासों की सृष्टि की। सन् १८९८ में किशोरीलाल गोस्वामी ने उपन्यास मासिक का प्रकाशन कर उसके माध्यम से हमें लगभग ६५ उपन्यास प्राप्त हुए। उदाहरण- 'तारा', 'रजिया बेगम', 'लखनऊ की कब्र का शाही महलसरा', 'परीणय', 'गुरूबहार', 'जिंदे की लाश' आदि। इनके आसपास विठ्ठलदास नागर, श्याम सुन्दर वैद्य, रामप्रताप शर्मा, मथुरा प्रसाद शर्मा आदि ने भी इस धारा के उपन्यास लिखे।

प्रथम ऐतिहासिक उपन्यासकार :

डॉ. सियाराम शरण प्रसाद लिखते हैं - "किशोरी लाल गोस्वामी ही हिन्दी के प्रथम ऐतिहासिक उपन्यासकार स्वीकृत हुए, क्योंकि उन्होंने सर्व प्रथम इस क्षेत्र में पदार्पण किया। साहित्यिक दृष्टिकोण से इनकी इस प्रकार की कृतियों का मूल अधिक नहीं रहा परन्तु ऐतिहासिक मूल्य बढ़ गया।"[८]

अन्य उपन्यासकार :

उपन्यास साहित्य के इतिहास में हरिऔध का 'ठेठ हिन्दी का ठाठ' जो (संवत् १९५६) तथा 'अधखिला फूल' (संवत् १९६४) में लिखा गया। उस समय लज्जाराम महेता ने 'धूर्त रसिक-लाल' संवत् १९५६ में लिखा। ब्रजनंदन सहाय ने कुछ भाव प्रधान उपन्यास लिखें। जैसे 'राधाकान्त', 'मालती' 'सौन्दर्योपासक'। राधाकृष्णदास का 'निस्सहाय हिन्दू' बालकृष्ण भट्ट का 'नूतन ब्रह्मचारी' तथा 'सौ अजान और एक सुजान' ठाकुर जगमोहनसिंह का 'श्यामा' आदि उपन्यास कोई विशेष महत्व नहीं रखते।

२. प्रेमचंद युग :

उपन्यास साहित्य में प्रेमचंद का आगमन एक अद्वितीय घटना है। क्योंकि उस समय हिन्दी उपन्यास अपने विकास की प्रारंभिक अवस्था में था। प्रेमचंद के आते ही उपन्यास जगत को एक नयी दिशा मिली। उनके पूर्व उपन्यास में मौलिकता का अभाव था जो प्रेमचंद के आने से दूर हुआ।

प्रेमचंद ने बारह उपन्यास लिखें। जिसमें विशुद्ध सामाजिक उपन्यास 'सेवासदन', 'निर्मला', 'गबन', 'वरदान' और सामाजिक एवं राजनीतिक उपन्यास में 'प्रेमाश्रम', 'रंगभूमि', 'कायाकल्प', 'कर्मभूमि', तथा 'गोदान' आदि का समावेश किया जा सकता है।

'सेवासदन' में भारतीय नारी की पराधीनता तथा वेश्या समस्या का चित्रण हुआ है। 'निर्मला' उपन्यास में उन्होंने नारी जीवन की करूणता का बड़ी कुशलता से चित्रण किया है। उसमें दहेज प्रथा, अनमेल विवाह, विधवा समस्या जैसी सामाजिक समस्याओं का चित्रण भी मिलता है। 'गोदान' हिन्दी साहित्य का श्रेष्ठ उपन्यास है। जिसमें सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक विषमताएँ, ग्रामीण समस्याएँ व नागरिक समस्याएँ आदि का यथार्थ वर्णन मिलता है। 'गोदान' उपन्यास को 'गरीबों की गीता' भी कहते है। प्रेमचन्दजी का 'मंगल सूत्र' अपूर्ण उपन्यास है।

'प्रेमचंद युग' के अन्य उपन्यासकारों में 'जयशंकर प्रसाद', विश्वम्भर नाथ 'कौशिक', चतुरसेन शास्त्री, पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र', वृन्दावनलाल वर्मा, उपेन्द्र नाथ 'अश्क', सियाराम शरण गुप्त, ऋषभचरण जैन आदि उल्लेखनीय है।

जयशंकर प्रसादजी ने 'कंकाल', 'तितली', 'इरावती', नामक तीन उपन्यास लिखे हैं। 'कंकाल' में उन्होंने भारतीय नारी-जीवन की दुर्दशा तथा धर्मान्धता का चित्रण किया है। इसी उपन्यास में तथाकथित उच्चवर्गीय तथा अभिजातवर्गीय लोगों में व्याप्त वर्णशंकरीय व्यवस्था का पर्दाफाश करते हुए उनके जीवन को 'कंकाल'का प्रतीक बताया है। 'तितली' में नारी हृदय की महानता का परिचय मिलता है। 'इरावती' उनका अधूरा उपन्यास है।

उसी युग में विश्वम्भरनाथ शर्मा 'कौशिक' के 'माँ', 'भिखारिणी', उपन्यास में नारी की स्थिति व विभिन्न पहलुओं का चित्रण मिलता है। चतुरसेन शास्त्री के 'व्यभिचार', 'हृदय की चाह', 'अमर अभिलाषा', 'आत्मदाह', 'वैशाली की नगरवधु', 'वयं रक्षाम:' आदि उपन्यासों में विधवा की आड़ में होने वाले महा पाप तथा देशी रियासतों में पनपनेवाले नग्न विलास का खुलकर चित्रण मिलता है। पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' का 'दिल्ली का दलाल', 'बुधुआ की बेटी', 'शराबी'आदि उपन्यास प्रमुख हैं।

जिसमें समाज का वास्ततिक चित्रण किया है। ऋषभचरण जैन के उपन्यासों में 'मास्टर साहब', 'गदर', 'दिल्ली का व्यभिचार', 'भाग्य', 'भाई' आदि उल्लेखनीय हैं। भगवती प्रसाद वाजपेयी की कुछ रचनाएँ प्रेमचंदयुग की तथा कुछ प्रेमचंदोत्तर युग की हैं।

इस युग में कुछ ऐतिहासिक उपन्यासकार भी उभरकर आये, जिनमें वृंदावनलाल वर्मा का नाम सर्वोपरी है। उन्होंने अपने उपन्यासों का कथानक बुन्देलखंड से चुना। आपके उपन्यासों में 'गढ़कुंडार', 'झाँसी की रानी लक्ष्मी बाई', 'कचनार', 'मृगनयनी', 'अहिल्याबाई' आदि उल्लेखनीय है।

३.प्रमचंदोत्तर युग :

प्रेमचंद युग के बाद उपन्यास साहित्य में कई नवीन प्रवृत्तियों का जन्म हुआ। इस काल में उपन्यासकारों पर फ्रायड, एडलर तथा मार्क्स का प्रभाव दिखाई देता है।

इस युग में सामान्यत: दो विचारधाराएँ हैं मुख्य रूप से दिखाई पड़ती है ,१.मनोविश्लेषणवादी २.सामाजिक यथार्थवादी।

प्रेमचंदोत्तर युग के उपन्यासकारों में यशपाल, जैनेन्द्र कुमार, अज्ञेय, भगवतीचरण वर्मा, अमृतलाल नागर, डॉ.रांगेय राघव, इलाचंद्र जोशी उल्लेखनीय है। इन सभी उपन्यासकारों का संक्षिप्त परिचय यहाँ दिया जा रहा है।

यशपाल :

यशपाल ने अपने उपन्यासों में साम्यवाद व विशिष्ट राजनीतिक विचारधारा को प्रस्तुत किया है। आपने -अपने उपन्यासों में रोमानी सामाजिक यथार्थवादी, प्राकृतवादी प्रवृतियों का चित्रण किया। रोमानी प्रवृत्ति का चित्रण 'दादा कामरेड़' उपन्यास में मिलता है। ' देशद्रोही' तथा 'दिव्या' में सामाजिक यथार्थवाद का चित्रण मिलता है। यहाँ रचनाकार ने एक ऐसे समाज की कल्पना की है जिसमें वर्गभेद एवं संघर्ष बिल्कुल भी न हो। 'झूंठा सच' नामक बृहत् उपन्यास भी अपना विशिष्ट महत्व साहित्य में रखता है जो भारत-पाकिस्तान विभाजन की विभीषिका पर अधारित है।

जैनेन्द्र कुमार :

जैनेन्द्र कुमार हिन्दी के प्रथम व्यक्तिवादी एवं मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार है। मनोविज्ञान और दर्शन का समन्वय करने में वे सफल उपन्यासकार माने जाते हैं। उनके उपन्यासों में 'सुनीता', 'परख', 'सुखदा', 'त्याग पत्र', 'कल्याणी' आदि प्रमुख हैं। इन सभी उपन्यासों के बारे में सारांशत: हम डॉ. देवराज के मतानुसार कह सकते हैं -''बौधिक गहनता और नैतिक सूक्ष्म विश्लेषण में वे

शायद देश के श्रेष्ठ उपन्यासकार है।''[१]

अज्ञेय :

आपने हिन्दी साहित्य की अनेक विधाओं में अपनी अमूल्य कृतियाँ प्रदान की हैं। आपकी तीन औपन्यासिक रचनाएँ उल्लेखनीय है - १. शेखर एक जीवनी (दो भाग) २. 'नदी के द्वीप'और ३.अपने-अपने अजनबी। 'शेखर एक जीवनी' ने हिन्दी साहित्य को एक नयी दिशा प्रदान की। 'नदी के द्वीप' के पात्र उच्च-शिक्षा प्राप्त बौद्धिक मध्यवर्गी हैं जो सेक्स एवं जीवन की अन्य समस्याओं में उलझे हुए हैं। 'अपने-अपने अजनबी'यूरोपीय अस्तित्वादी विचारधारा से प्रेरित है।

भगवती चरण वर्मा :

भगवती चरण वर्मा का पहला उपन्यास 'पतन' सन् १९२७ में प्रकाशित हुआ। इस उपन्यास के बाद 'चित्रलेखा', 'तीन वर्ष', 'टेढ़े मेढ़े रास्ते', 'आखिरी पाव', 'भूले बिसरे चित्र' आपके श्रेष्ठ उपन्यास हैं। उन्होंने इन उपन्यासों में सामाजिक, राजनैतिक और मनोविश्लेषणात्मक प्रवृत्तियों का चित्रण किया है।

अमृतलाल नागर :

नागरजी के उपन्यासों में व्यक्तिवादी चेतना प्रमुख रही है। आपके उपन्यासों में 'महाकाल', 'सेठ बांकेमल', 'बूंद और समुद्र', 'सुहाग के नूपुर' उल्लेखनीय है। आपका 'ये कोठे वालियों" उपन्यास भी काफी लोकप्रिय हुआ, जिसमें वेश्या समाज का नग्न यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया गया है।

डॉ. रांगेय राघव :

आपका पहला उपन्यास 'घरौंदे' है। उनके सामाजिक उपन्यासों में 'कब तक पुकारू', 'राई और पर्वत', 'दायरे", 'बन्दूक और बीन', 'उबाल' आदि

प्रमुख हैं । ऐतिहासिक उपन्यासों में 'मुर्दों का टीला', 'चीवर', 'प्रतिदान', 'पक्षी और आकाश' आदि उल्लेखनीय हैं । आपकी प्रतिनिधि रचनाओं में 'कब तक पुकारू' तथा 'मुर्दों का टीला' विशेष महत्व रखते हैं । समाजवादी चेतना, विषमताओं का निष्पक्ष चित्रण, प्रखर संवेदना शक्ति आदि इनकी औन्यासिक विशिष्टतायें हैं ।

इलाचन्द्र जोशी :

मनोविज्ञान के सिद्धातों का सूक्ष्म चित्रण उनके उपन्यासों में मिलता है । 'आपके सन्यासी', 'पर्दे के रानी', 'मुक्तपथ', 'सुबह के भूले' प्रमुख उपन्यास हैं । इन उपन्यासों में व्यक्ति की मानसिक स्थिति का चित्रण मिलना स्वभाविक है । उनकी गणना हिन्दी के प्रमुख मनोवैज्ञानिक उपन्यासकारों में की जाती है ।

इन सभी उपन्यासकारों के अतिरिक्त भगवती प्रसाद वाजपेयी, सियारामशरण गुप्त , रामेश्वर शुक्ल , डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी इत्यादि के उपन्यास भी एक विशिष्ट महत्व रखते हैं ।

स्वातंत्र्योत्तर उपन्यासकार :

आजादी के बाद के उपन्यासकारों में विष्णुप्रभाकर, डॉ. देवराज, उदयशंकर भट्ट , फणीश्वरनाथ रेणु , धर्मवीर भारती, कृष्णचंद्र शर्मा, राजेन्द्र यादव, नागार्जुन, मन्नूभंडारी, लक्ष्मी नारायणलाल, मोहनराकेश, रमेश बक्षी आदि प्रतिनिधि हैं ।

'उदय शंकर भट्ट' का 'लहरे और मनुष्य', 'लोक-परलोक', 'नये मोड़', 'सागर' उल्लेखनीय उपन्यास हैं । इनमें व्यक्तिवादी चेतना का चित्रण मिलता है । 'विष्णु प्रभाकर' नाटककार होते हुए भी उन्होंने 'निशिकान्त, 'तटके बंधन' नामक उपन्यास लिखे हैं । जिसमें व्यक्ति व समाज तथा संघर्ष का निरूपण किया है । 'पथ की खोज'(दो भाग), 'रोड़े और पत्थर'तथा 'अजय की डायरी' डॉ. देवराज के प्रमुख उपन्यास हैं । उनके उपन्यासों में मनोवैज्ञानिक

विश्लेषण पाया जाता है ।

'धर्मवीर भारती' के उपन्यासों में 'गुनाहों का देवता' तथा 'सूरज का सातवाँ घोड़ा' विशेष लोकप्रिय है । उन्होंने अपने उपन्यासों में मानसिक एवं दैहिक प्रेम, निम्न-मध्यवर्ग की कुंठा, जीवन के खोखलेपन आदि का सफल चित्रण किया है ।

राजेन्द्र यादव का 'उखड़े हुए लोग', 'प्रेत बोलते है', 'शह और मात' उल्लेखनीय उपन्यास है । इस उपन्यासों में मध्यमवर्गीय जीवन की विकृतियाँ का यथार्थ चित्रण मिलता है । उनके अतिरिक्त इस अवधि में फणीश्वरनाथ रेणु का 'मैला आँचल' एवं 'परती परिकथा', देवेन्द्र सत्यार्थी का 'रथ का पहिया', मन्नूभंडारी का 'आपका बंटी' और 'महाभोज', अमृतलाल नागर का 'शतरंज के मोहरे', 'मोहन राकेश' का 'अंधेरे बंद कमरे', नागार्जुन का 'बलचनमा', 'बाबा बटेसर नाथ' आदि उल्लेखनीय उपन्यास है ।

प्रस्तुत उपन्यास संक्षेप में राजनीति, समाजधर्म, शिक्षा आदि समस्याओं से बुरी तरह ग्रस्त एवं आक्रान्त है, जो अधिकतर स्वाधीनता के पश्चात् की राजनीतिक सामाजिक परिस्थितियों पर आधारित हैं और जिनमें स्वातंत्र्योत्तर भ्रष्टाचार एवं कदाचार का खुल्लम-खुल्ला चित्रण उपलब्ध होता है ।

हिन्दी कहानी का विकास :

किसी भी भाषा साहित्य में निरूपण की अनेक विधाएँ होती है, जो विषय वस्तु पर आधारित होती है । उपन्यास, कहानी, आलोचना, आत्मकथा, जीवनी, निबन्ध आदि गद्य की प्रसिद्ध और सफल विधाएँ हैं । गद्य साहित्य में सामान्यत: सबसे अधिक लोकप्रिय स्वरूप कहानी है, क्योकि आज के यांत्रिक युग में पाठक को बड़े-बड़े उपन्यास पढ़ने का समय ही नहीं मिलता । कहानी छोटे स्वरूप की होने के कारण पाठक आसानी से पढ़ता है । अत: आज कहानियाँ अधिक लिखी जाने लगी है । कहानी की परिभाषा में भी कहा गया है - "short-story is short enough to be read ina single sitting" अर्थात् 'कहानी इतनी संक्षिप्त होती

है कि उसे एक बैठक में समाप्त किया जा सकता है।'

यहाँ हिन्दी कहानी के विकास की संक्षिप्त चर्चा करने का हमारा उपक्रम है।

हिन्दी कहानी का विकास :

उपन्यास की तरह कहानी गद्य साहित्य का कोई नया रूप विधान नहीं है। प्रागैतिहासिक काल में मनुष्य की प्रत्येक जाति में कहानियों की सृष्टि होती आई है; चाहे मौखिक लोक कथाओं के रूप में या लिखित साहित्य कहानियों के रूप में। इन प्राचीन कहानियों से आधुनिक कहानी का क्रमागत सम्बन्ध भी खोजा सकता है। पुरानी कहानियाँ साधारण वर्णात्मक शैली में पूरा जीवन-वृत्त संक्षेप में उपस्थित करती थी। उसमें कथावस्तु, चरित्र चित्रण किसी विशेष मानसिक द्वन्द्व या स्थिति का कम हुआ करता था।

उसके बाद नयी कहानी ने जन्म लिया। नयी कहानी की दुर्बलताओं ने अकहानी, सहजकहानी, सचेतन कहानी, समान्तर कहानी, जनवादी कहानी, सक्रिय कहानी को जन्म दिया; क्योंकि नयी कहानी में सेक्स की ओर रुझान, आयातित जीवन दृष्टि के प्रति मोह, आपसी दलबन्दी आदि कारणों से नयी कहानी पुरानी लगने लगी।

"हिन्दी की पहली कहानी किसे माना जाय, इस प्रश्न पर विद्वानो में गम्भीर मतभेद है। लगभग एक दर्जन कहानियाँ इस यश की दावेदार हैं और उन्हें वरिष्ठ आलोचकों का समर्थन प्राप्त है।"[१०] गद्य साहित्य में हिन्दी की कहानीनुमा रचनाएँ आरंभ से ही उपलब्ध होने लगी थी। 'गोरा बादल की कथा' जटमल द्वारा रचित, जिसमें कथातत्व विद्यमान है । साथ-साथ लल्लूलाल द्वारा रचित 'प्रेमसागर' श्री सदल मिश्र के 'नासिकेतोपाख्यान' भी कथात्मकता की दृष्टि से हमारा ध्यान खींचते हैं। इसके पहले वार्ता-साहित्य में थोडी-बहुत कथात्मकता प्राप्त होती है । इंशा अल्ला खाँ द्वारा रचित 'रानी केतकी की कहानी', शिवप्रसाद सितारे हिंद की 'राजा भोज का सपना' , भारतेन्दुजी की 'एक

अद्भूत अपूर्व स्वप्न' आदि में कहानी के तत्व मिलते हैं।

हिन्दी की पहली कहानी के संदर्भ में आलोचकों में कुछ मतभेद है। डॉ.सुरेश सिन्हा ने किशोरीलाल गोस्वामी रचित 'इन्दुमती'(१९००) को पहली मौलिक कहानी माना है। डॉ.लक्ष्मीनारायण लाल ने शिल्पविधि के लिहाज से आचार्य रामचन्द्र शुक्ल द्वारा प्रणीत 'ग्यारह वर्ष का समय'(१९०३) को पहली मौलिक कहानी का दर्जा दिया। लेकिन माधव प्रसाद मिश्र की 'लड़की की कहानी' (१९०४) को डॉ.मुरारीलाल 'शापित' ने हिन्दी की पहली मौलिक कहानी माना है।

हिन्दी में आधुनिक कहानी की परंपरा का विकास जयशंकर प्रसाद की 'ग्राम' और मुन्शी प्रेमचन्द की 'पंचपरमेश्वर' से हुआ माना जाता है। प्रसादजी की यह कहानी १९११ में 'इन्दु' में छपी और प्रेमचन्द की 'पंचपरमेश्वर' (१९१६) में प्रकाशित हुई थी।

इसी समय में राधिका रमणप्रसाद सिंह 'करनों का कँगना'(१९१३) विश्वम्भर शर्मा 'कौशिक'- 'रक्षाबंधन'(१९१३) और चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी' 'उसने कहा था' (१९१५) को लेकर कहानी जगत में आते हैं। किन्तु इस प्रवृत्ति की कहानियों को सही ढंग से उत्कर्ष दिया प्रेमचन्दजी ने ।

सन् १९११-१६ से लेकर आज तक हिन्दी में बहुत सी कहानियाँ लिखी जा चुकी हैं । हम आगे भी जान चुके हैं कि हिन्दी पाठकों की रुचि स्वाभाविक रूप से कहानी पढ़ने की ओर रही है । जिससे मासिक और साप्ताहिक पत्रिकाओं की बात तो ठीक , दैनिक पत्रों में भी धड़ा-धड़ कहानियाँ छपती आयी हैं। सन् १९११ से आजतक कहानी साहित्य के विकास को रचनाकार का विवरण देकर प्रत्येक उल्लेखनीय कहानीकार या कहानी संग्रह का विवेचन करना मेरे अध्ययन के विषय सन्दर्भ में अपेक्षित भी नहीं है। कहानी के निर्माण क्षेत्र में केवल थोडे ही प्रथम श्रेणी के कहानीकार है जिन्होंने अपनी रचनात्मक प्रतिभा से हिन्दी कहानी को नई दृष्टि, शैली और क्षेत्र प्रदान किये है। उदा. जयशंकर प्रसाद , प्रेमचन्द, जैनेन्द्र कुमार और यशपाल आदि। इनके सिवाय अन्य कहानीकार हैं

जैसे कि चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी', विश्वम्भरनाथ शर्मा 'कौशिक', रायकृष्णदास , चतुरसेन शास्त्री, इलाचन्द्र जोशी, भगवतीचरण वर्मा, भगवतीप्रसाद वाजपेयी, विष्णुप्रभाकर जो दूसरी श्रेणी में आते है ।

जयशंकर प्रसाद , प्रेमचन्द , जैनेन्द्र और यशपाल कहानी के राजपंथो के निर्माताओं की कहानी के विकास को समझने इन प्रतिभाशाली रचनाकारों की जीवनदृष्टि और रचनाशैली का विवेचन व कृतित्व के संदर्भ और पृष्ठभूमि में रखकर अन्य कहानीकारों की रचनाओं को भी परखने की आवश्यकता है ।

यहाँ कुछेक सुप्रसिद्ध हिन्दी कहानीकारों का परिचय हम बहुत संक्षेप में देने जा रहे है -

जयशंकर प्रसाद :

प्रसादजी मूलतः एक रोमांटिक छायावादी कवि थे । इसलिए उनकी कहानियों में काव्यत्व की भाव-कोमल रंगीनी है । इस कारण उनकी कहानियों में भावपूर्ण वातावरण कथा-सूत्र को पकड़कर सहज वेग से आगे नहीं बढ़ सकता । वरन् परिदृश्यों की सौन्दर्य छटा में उसका मन रमता है, उलझता है । उनकी कहानियों में कहानीपन कम , गद्यकाव्यत्मकता ज्यादा है ।

जयशंकर प्रसाद के पाँच कहानी संग्रह हमें मिलते है - जैसे-'छाया', 'प्रतिध्वनी', 'आकाश दीप', 'आँधी', 'इन्द्रजाल' । व्यक्ति के साधारण जीवन में जो कुछ मानवीय और असाधारण है जहाँ निश्छल प्रेम और कारूणा की स्रोतस्विनी प्रवाहित है उसको उभारकर सामने लाना अद्वितीय है । उदा. के लिए 'पुरस्कार', 'विसाती', 'आकाशदीप' आदि कहानियों को लिया जा सकता है ।

मुन्शी प्रेमचन्द :

कलम के सिपाही प्रेमचन्द हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ कहानीकार थे । हिन्दी के तत्कालीन श्रद्धालु और कृतज्ञ पाठकों ने इस विभूति को 'उपन्यास सम्राट'की

उपाधि दी। पेमचन्द ने यद्यपि प्रसाद के पहले ही कहानियाँ लिखना आरंभ कर दिया। परन्तु हिन्दी में उनकी पहली कहानी 'पंच-परमेश्वर' सन् १९१६में प्रकाशित हुई। इससे पहले वे उर्दू में नवाबराय के नाम से लिखते थे। उर्दू में उनकी पाँच कहानियों का संग्रह 'सोजेवतन' १९०७ में छपा था। इसमें अँग्रेजों के खिलाफ लिखा था; इसी कारण उस कहानी संग्रह को जब्त करके अँग्रेज सरकार ने जलवा दिया था। उनका पहला कहानी संग्रह जो उर्दू से अनुवादित हुआ था। वह 'सप्तरोज'नाम से १९१५ में छपा। इसके बाद ही मुन्शी प्रेमचन्द ने अगले २० वर्षों में लगभग ३०० जितनी कहानियाँ लिखी। अब उनमें से लगभग १५० कहानियाँ 'मानसरोवर' के आठ भागों में विभक्त हुई है।

प्रेमचन्द ने पीड़ित-दलित जनता के प्रति सहज सहानुभूति प्रकट की हैं। वे यथार्थवादी लेखक होने के कारण उनकी अनेक कहानियों से की तुलना विश्व की श्रेष्ठ कहानियों से की जा सकती है। जैसे 'पंचपरमेश्वर','बड़े घर की बेटी', 'कफ़न', 'ईदगाह', 'शतरंज के खिलाडी', 'पूस की रात', 'सद्गति', 'ठाकुर का कुँआ', 'सवा शेर गेहूँ', 'दो बौलों की आत्मकथा', 'नशा', 'नमक का दारोगा', 'मंत्र', 'बेटो वाली विधवा' आदि उनकी बड़ी चर्चित कहानियाँ रही हैं। इस सन्दर्भ में उनकी तुलना गोर्की, चेखोव, मोपासा जैसे विश्व के मांधाता कहानीकारों से की जाती रही है।

चन्दधर शर्मा 'गुलेरी':

गुलेरीजी की 'उसने कहा था' हिन्दी साहित्य की अद्वितीय कहानी है ; जो १९१५ में प्रकाशित हुई। अन्य कहनियाँ उतनी प्रचलित नहीं है। अत: अपनी एक मात्र कहानी -उसने कहा था- के आधार पर उनकी गणना हिंदी के श्रेष्ठ कथाकारों में होती है। हिन्दी का सायद ही कोई ऐसा कहानी संकलन होगा जिसमें इस कहानी को स्थान न दिया गया हो, क्योंकि वस्तु एवं शिल्प की दृष्टि से यह एक अनूठी और अद्वितीय कहानी है। प्रथम विश्व युध्ध की पृष्ठभूमि में लिखि हुई यह प्रथम चैतसिक प्रेमकथा Platonic love-story' है।

विश्वम्भरनाथ शर्मा 'कौशिक' :

कौशिक जी भी प्रेमचंद की तरह पहले उर्दू में लिखते थे, बाद में हिन्दी में आए। उनकी पहेली कहानी 'रक्षाबन्धन' सन् १९१३ में प्रकाशित हुई थी। वे अन्त तक समाज-सुधार की भावना से ऊपर न उठ सके।

पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' :

आप एक नयी भाषा-शैली, क्रान्तिकारी भावना और राजनैतिक चेतना लेकर सन् १९२२ में हिन्दी कहानी जगत में आये। उनके आगमन की तुलना किसी ने 'उल्कापात' तो किसी ने 'धूमकेतु' के उदय जैसी आकस्मिक घटनाओं सें की है ; तो कोई तुफान और बवडंर का नाम लेते हैं। उग्रजी क्रान्तिकारी कहानीकार तो है ही, किन्तु उनकी गणना हिन्दी के विशिष्ट गद्य शैलीकारों में होती है। उनका गद्य बड़ा ही सशक्त, प्राणवान और व्यंग्यात्मक होता है।

जैनेन्द्र कुमार :

जैनेन्द्र कुमार ने हिन्दी कहानी जगत को एक नयी अन्तर्दृष्टि, संवेदनशीलता और दार्शनिक गहराई प्रदान की है। जैनैन्द्र ने आन्तरिक और बाह्य जीवन के उभय पक्ष को समर्थ मनोवैज्ञानिक सच्चाई के साथ समन्वित करने की कोशिश की है। उनकी कहानियों में मनोवैज्ञानिक विश्लेषण तथा मानव-मन की अतल गहराईयों का बड़ा ही सूक्ष्म चित्रण मिलता है। शायद इसीलिए उनकी तुलना बंगला कथाकार शरतबाबू से होती रही है। उनकी सुप्रसिद्ध कहानियों में 'पत्नी', 'जाह्नवी', 'फोटोग्राफर', 'गौ माता', 'अपना-अपना भाग्य', 'भाभी' आदि की गणना कर सकते हैं।

इलाचंद्र जोशी :

जैनेन्द्रकुमार की मनोवैज्ञानिकता से इलाचन्द्र अवश्य प्रभावित हुए है। लेकिन एक अंतर है-जैनेन्द्र की मनोवैज्ञानिक चित्रण की प्रणाली अपने जीवनानुभव

एवं भाव चेतन के मानस की उपज है। जबकि इलाचन्द्रजोशी में मनुष्य की मनोगत दिशाओं और अन्तर्द्वन्द्वों का चित्रण कम, फ्रायड़ की प्रणाली से किया गया मनोविकारों का विश्लेषण अधिक है। जैनेन्द्र जीवन लिख रहे थे और जोशी शास्त्र। यदि उनमें जैनैन्द्र सी जीवनानुभवों की गहराई होती तो वे एक अच्छे सफल कहानीकार हो सकते थे।

भगवती चरणवर्मा :

भगवतीचरण वर्माजी फ्रायड़ीवादी कहे जाते हैं। लेकिन मूलतः वे मानवतावादी थे। फिरभी, फ्रायड़ी अर्धसत्यों का चित्रण करके मनुष्य को परिस्थितियों का ही नहीं, परंतु अर्ध-चेतन काम-वासनाओं का निरूपाय, दास और सभ्यता के बाहयावरण ढका-छिपा, लेकिन मूलतः हिंसा, पाशविक और स्वार्थी चित्रण किया है। वर्माजी की कहानियों से कहीं-कहीं हास्य और व्यंग्य का पुट मिलता है। इस सन्दर्भ में उनकी 'प्रायश्चित', 'मुगलों ने सल्तनत बख्श दी', 'इन्स्टालमेंट' आदि कहानियों को याद किया जा सकता है।

सच्चिदानंद हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय' :

प्रेमचंदोत्तर हिन्दी कहानिकारों में अज्ञेयजी का अपना एक विशिष्ट स्थान है। जैनेन्द्रजी की भाँति उनकी कहानियों में भी मनुष्य की अचेतन मन की गहराईयों को छूने की क्षमता है। उनके पास जीवनानुभवों का वैविध्य भी है। वस्तु और शिल्प दोनों दृष्टियों से उनकी कहानियाँ पाठकों का ध्यान आकर्षित करती है। 'रोज', 'नारंगियाँ', 'एक दिन की सभ्यता', 'गेंगरीन', 'शरणदाता', 'विपथगा' आदि उनकी उल्लेखनीय एवं चर्चित कहानियाँ हैं। नयी कहानी या आधुनिक कहानी का कोई भी ऐसा संकलन न होगा, जिसमें अज्ञेयजी को स्थान न मिला हो। इससे इतना तो प्रमाणित होता है कि आधुनिक नयी कहानी की चर्चा अज्ञेय के बिना अपूर्ण रह जाती है।

यशपाल :

यशपाल प्रेमचन्द एवं जैनेन्द्र के बाद ही हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ कहानीकार है। कुछ प्रारंभ की कहानियों को छोड़कर हम कह सकते हैं कि उनकी अधिक कहानियाँ यथार्थवादी हैं। उनकी अनेक कहानियों में मार्क्सवादी दृष्टिकोण नज़र आता है। उनके लगभग दश कहानी संगह प्रकाशित हो चुके हैं। यशपाल ने हिन्दी की आम मानवतावादी परंपरा के, नयी सामाजिक, राजनैतिक, चेतना देकर ऊँचे धरातल पर उठाया। मार्क्सवादी चेतना के साथ-साथ उनकी कहानियाँ मानवतावादी जीवन-मूल्यों को उकेरने वाली कहानियाँ है। 'करवाव्रत', 'परदा', 'दु:ख', 'दानवीर सेठ' आदि उनकी चर्चित कहानियाँ है।

नयी कहानी :

'कहानी नयी कहानी' के अन्तर्गत नामवर सिंह ने 'नयी कहानी' के नामकरण का श्रेय श्री कमलेश्वर को दिया है। डॉ. सुरेश सिन्हा - "राजेन्द्रयादव को नयी कहानी की शरूआत से जोड़ते है ; जबकि नामवर सिंह, निर्मलवर्मा की कहानी 'परिन्दे' को नयी कहानी की प्रथम कहानी सिद्ध करते हुए प्रकारान्तर से निर्मल वर्मा को नयी कहानी का प्रथम स्तंभ मानते प्रतीत होते हैं।"[११]

नयी कहानी की उपलब्धियाँ :

नयी कहानी का वैचारिक धरातल पूर्ववर्ती कहानी की अपेक्षा सुलझी हुई, खुली और प्रगतिशील है। नयी कहानी ने अनेक संकीर्णताओं को तोड़ा है। डॉ. हरदयाल के शब्दों में कह सकते है "-नयी कहानी , नये मनुष्यों के सन्दर्भों , नयी परिस्थितियों से उत्प्रेरित नये नये अनुभवों , नयी संवेदनाओं , नये विचारों को नये कथा-शिल्प के साथ किया गया यथार्थ है।"[१२] मधुरेशजी का नयी कहानी की उपलब्धि के बारे में यहीं मानना है- "परंपरागत नैतिक मान्याताओं को अपने विवेक से तौलने के आग्रह की जो परंपरा यशपाल की

कहानियों से शुरू हुई; इसने इस परंपरा का निश्चित विकास किया है।''[१३]

नयी कहानी का चिन्तन परंपरागत मूल्यों और नैतिक मान्यताओं के लिए चुनौती पूर्ण है। यह भी सत्य है कि स्वतंत्रता के बाद मध्यमवर्ग की एक स्वतंत्र सत्ता स्थापित हुई है। इस मध्यमवर्ग को उसकी खूबियाँ व खामियों के साथ पहली बार साहित्य स्तर पर नयी कहानी में पस्तुत किया है।

नयी कहानी की भाषा की उपलब्धि भी कम महत्तर नहीं है। कमलेश्वर के अनुसार इसमें पहली बार भाषा की छिपी हुई उर्जा की तलाश और उसका सृजनात्मक उपयोग हुआ है। प्रतीको और बिम्बों का सार्थक उपयोग इस 'शिल्प' की एक अन्य विशेषता है।

नयी कहानी के प्रमुख हस्ताक्षरों में कृष्णा सोबती, उषा प्रियवदा, मन्नू भंडारी, निर्मल वर्मा, रमेशबक्षी, भीष्म साहनी, अमरकांत, मार्कडेंय, आदि की कहानियों को रेखांकित किया जा सकता है। इन नये कहानिकारों ने सांप्रत जीवन में व्याप्त विसंगतियों और विद्रूपताओं को चित्रित करते हुए आज के मनुष्य की पीड़ा, संत्रास, घुटन, एकाकीपन, बेरोजगारी की व्यथा आदि को अपनी पैनी सूक्ष्म दृष्टि से उद्‌घाटित किया है।

नयी कहानी की सीमाएँ :

नयी कहनी की उपलब्धि की तरह सीमाएँ भी स्पष्ट है।

नयी कहानी की सबसे बडी सीमा 'सेक्स की ओर अतिशय ढलना' मानी गई है। काम सम्बन्धों पर केन्द्रित 'सेक्स' कुछ कहानियों में विकृत बनकर सामने आया। ६३-६४ तक आते-आते नयी कहानी का आन्दोलन बुझ-सा गया। और हिन्दी कहानी साहित्य में फिर बदलाव आया।

आठवें दशक के मध्य, कहानी फिर बदलने लगी। इस दौरान जिन आन्दोलनों से गुजरी है उनमें कुछ इस प्रकार है - १. अकहानी, सहज कहानी, सचेतन कहानी, समान्तर कहानी, जनवादी कहानी, सक्रिय कहानी।

प्रत्येक आन्दोलन ने कुछ अच्छे हस्ताक्षर दिये है। आंदोलन आमतौर

पर अच्छे नहीं समझे जाते । लेकिन जैसा कि प्रभाकर माचवे का मानना है कि आंदोलन जीवन्तता के लक्षण हैं । कहानी से सम्बन्धित आंदोलन की प्रवृत्तियाँ कहानी में नयेपन की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करती है । वैसे मैंने कहानी के विकास के इतिहास में गागर में सागर भरने की कोशिश की है । मुझे संक्षिप्त में चर्चा करनी थी । इस कारण कई लेखक, कई आलोचकों की व्याख्याओं को उद्‌घाटित नहीं कर सका हूँ, फिर भी उनको यथायोग्य न्याय देने की मैंने यथासंभव चेष्टा की है ।

कथासाहित्य और मानव-समस्याओं का सम्बन्ध :

कथासाहित्य का मानव समस्याओं से गहरा सम्बन्ध है । साहित्य समाज का दर्पण है । साहित्य अपने समाज का ब्यौरा प्रस्तुत करता है । महान साहित्यकार मानव स्वभाव और मनुष्य की स्थिति के बारें में अपनी अन्तर्दृष्टियाँ प्रस्तुत करते है । कोई भी उपन्यासकार को सफल होने के लिए ऐसे चरित्रों का चित्रण करना होगा जिन्हें पाठक, समाज पहचान सके और जिनके साथ तादात्म्य का अनुभव कर सके । जूड़ी बनेड़ लिखते है-''साहित्य ऐसी संस्कृतियों का एक कोश होता है जिनके सहारे कोई बिरादरी अपनी अस्मिता पहचानती है और यह निर्णय करती है कि औचित्य क्या है, कि व्यक्तियों को कैसे आचरण करना चाहिए, कि न्याय और अन्याय का निर्णय कैसे होना चाहिए , समाज का क्या रूप होना चाहिए , इत्यादि ।''[१४]

लिखते समय कथा साहित्यकार अपने मानव समाज का एक दस्तावेज भी प्रस्तुत कर सकते हैं लेकिन अधिकतर लेखकों का मुख्य उद्देश्य यह न भी हो सकता है । सामाजिक प्रश्नों से उलझते हुए कथा साहित्यकार अतीत आचरण का भी समर्थन कर सकता है । वह नये ढाँचे गढ़ सकता है, समाज का एक अंग होने के कारण वह समकालीन स्थितियों पर प्रश्न चिन्ह लगा सकता है और परिवर्तन की संभावनाएँ सूचित कर सकता है ।

सामाजिक परिवर्तन कथा साहित्य के माध्यम से संभवित है । अपने

युगान्तकारी कथा साहित्य के द्वारा भारतीय समाज को प्रेमचन्दजी ने अनेक मोड़ दिया। डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी द्वारा किया गया उनका यह मत इस दृष्टि से उल्लेखनीय है-"हिन्दी के प्रसिद्ध उपन्यासकार प्रेमचन्द शताब्दियों से पद-दलित और अपमानित कृषकों की आवाज थे। पर्दे में कैद, पद-पद पर लाछिंत और अपमानित असहाय नारी जाति की महिमा के जबर्दस्त वकील थे, और गरीबों और बेकसों के महत्व के प्रचारक थे...। अगर कोई उत्तर भारत की समस्त जनता के आचार-विचार, भाषा-भाव, रहन-सहन, आशा-आकांक्षा, दु:ख-सुख और सूझ-बूझ को जानना चाहे तो प्रेमचंद से अधिक उत्तम परिचायक इस युग में नहीं मिलेगा।"[१५]

प्रेमचन्द की 'कफन' कहानी पढ़ने पर पाठक को जिन्दगी में मिलनेवाले अनेक घीसू और माधव उसकी संवेदना का विषय बन जाते हैं। प्रेमचन्द की संवेदना हमारा संस्कार बनकर स्थिर हो जाती है। कथा साहित्यकार इन संस्कारों के माध्यम से ही अपने समाज में परिवर्तन का प्रयास करता है। समस्याओं का एक लम्बा काफिला हम सभी के साथ है पर हम सभी अपने-अपने हिस्सों को लेकर चल रहे हैं। साहित्यकार सबके बोझ को लेकर चलता है। वह अपनी यात्रा में अकेला है।

कुल मिलाकर हम कह सकते है कि कथा-साहित्य को मानवजीवन एवं मानवजीवन की समस्याओं के साथ अन्त: सम्बन्ध है। कथा साहित्य का और हमारे जीवन का सम्बन्ध अटूट और सास्वत है।

कथाकार मन्नू भंडारी :

छठवें दशक की सबसे चर्चित कथाकार श्रीमती मन्नू भंडारीजी हैं। उनकी कथायात्रा एक नया ही मोड़ लेकर आती है। पारिवारिक सम्बन्धों के अन्तर्गत गहरी होती हुई दरारे, अन्तर्द्वन्द्व से उठता हुआ सैलाब, पात्रों की उठती-गिरती हुई मानसिकता, कहने की सहजता, लेखन में आये सीधे विद्रोहात्मक पहलू इन सबसे गुजरी है मन्नूजी की कथायात्रा। मन्नूजी व्यक्तिओं की मानसिक उलझनों,

द्वन्द्वों , प्रेरणाओं एवं प्रवृत्तियों को अंकन करने की ओर विशेष ध्यान दिया है। उन्होंने निश्चित रूप से सामाजिक परिवेश को व्यक्तित्व के विकास में प्रेरक शक्ति के रूप में देखा है। अब तक मन्नूजी के सात कहानी संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं।

'मैं हार गई'(१९५७), एक प्लेट सैलाब (१९६८), यही सच है (१९६६), 'तीन निगाहों कि तसवीर'(१९५९), 'त्रिशंकु'(१९७८), आसमाता (बाल साहित्य) मेरी प्रिय कहानियाँ।

उपन्यासों में सर्वप्रथम 'एक इंच मुस्कान' (१९६१), (राजेन्द्र यादव के साथ) 'आपका बंटी'(१९७१), 'महाभोज'(१९७९) साथ ही बाल उपन्यास 'कलवा' (१९७१) और शरतचंद्र की कहानी पर आधारित एक और सामाजिक उपन्यास 'स्वामी' (१९८२) है। स्वतंत्र नाटक 'बिना दिवारों के घर'(१९६६) और अपने ही उपन्यास 'महाभोज' पर आधारित नाटक 'महाभोज' (१९८३) भी लिखा।

मन्नूजी की पहली कहानी :

मन्नूजी की सर्व प्रथम कहानी १९५६ में 'नया समाज' पत्रिका में छपी थी। जिसका नाम 'मैं हार गई' था। मन्नू भंडारीजी खुद इस कहानी के बारे में लिखती है -''मैंने अपनी पहली ''कहानी ' मैं हार गई ' कैसे लिखी, मैं खुद नहीं जानती। लिख तो ली पर समझ ही नहीं आया कि किससे इस पर सलाह-सुझाव मागूँ। परिचय दायरे में कोई था ही नहीं।'' इस प्रकार वे लिखती रही। 'नया समाज'के संपादक श्री भैरव प्रसाद गुप्त उनको प्रोत्साहित करते गए। एक के बाद एक मन्नूजी की कहानियाँ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में छपने लगी और इनकी रचनाओं को पसन्द करने वालों का एक अच्छा खासा वर्ग तैयार हो गया।

मन्नूजी का कथा साहित्य हिन्दी की परिधि को पार करता हुआ अनेक भाषाओ में अनुवादित हुआ। उनकी कई कहानियों का अनुवाद देशी-विदेशी

भाषा में हुआ है। पंजाबी में उनकी बीस कहानियों का अनुवाद कर उसका संकलन भी निकाला गया। गुजराती में 'खोटे सिक्के' का तथा मराठी, कन्नड, मलयालम, तेलुगु, सिंधी एवं बंगला में भी उनकी कहानियों का अनुवाद हुआ है। विदेशी भाषा में विशेषतः डच एवं अंग्रेजी में भी उनके कथा साहित्य का अनुवाद हुआ है। डॉ. अनीता राजूरकर 'कथाकार मन्नूभंडारी' में लिखती हैं - ''सुप्रसिद्ध उपन्यास 'आपका बंटी' का अनुवाद गुजराती भाषा में निरंजन सट्टावाला ने, मराठी में इन्दुमती सेवडे ने तथा अंग्रेजी में जयरतन ने किया है। सिंधी, पंजाबी, कन्नड, उडिया, आदि भाषाओं में भी उक्त उपन्यास के अनुवाद हुए है।''[१६]

मन्नूजी के उपन्यासों का संक्षिप्त परिचय :

मन्नूजी का प्रथम उपन्यास 'एक इंच मुस्कान' राजेन्द्र यादव के सहयोग से लिखा गया है। इस उपन्यास को लेकर मेरे मन में प्रश्न हुआ था कि एक उपन्यास को दो व्यक्ति कैसे लिख सकते है ? क्योंकि दोनो लेखकों के अपने-अपने कथा का भावना-क्षेत्र अलग होता है। तो इस उपन्यास में यह कैसे संभव हो सका। इस प्रश्न को मैंने मन्नूजी के समक्ष रखा था। तब सहृदया मन्नूजी ने मुझे बताया-''इस उपन्यास के पुरुष पात्रों को राजेन्द्रजी ने सँवारा और स्त्री पात्रों को मैंने सँवारा''।

उक्त उपन्यास १९६१ में ज्ञानोदय मासिक पत्रिका में जनवरी से दिसंबर तक बारह खंडो में धारावाहिक रूप में प्रकाशित हुआ था।

लेखक की दृष्टि से 'आपका बंटी' (१९७१) मन्नू भंडारी का प्रथम स्वतंत्र उपन्यास माना जाएगा। इस उपन्यास में मन्नूजी ने बंटी नामक बालक का मर्मस्पर्शी चित्रण करते हुए आधुनिक व्यक्ति चेतना संपन्न नारी की समस्या की ओर पाठक का ध्यान खींचा।

'महाभोज' (१९७६) मन्नूजी का दूसरा स्वतंत्र उपन्यास है। इस उपन्यास का कथानक सामाजिक है, परंतु परिवेश राजनीतिक होने की वजह से इसे

राजनैतिक उपन्यास कहना अधिक उचित होगा।

मन्नू भंडारी के कथा साहित्य में स्त्री का एक नया ही रूप उभरकर हमारे सामने आया है। संवेदना ओर परिवेश के प्रति गहरी सहानुभूति ही मन्नू भंडारी को बार-बार अपनी खोज के लिए उकसाती रही है। और इसी कारण मैं कह सकता हूँ कि साहित्य सृजन की इस लम्बी अन्तर्यात्रा की दौड में टिक सकी है ।

साहित्य विषयक मन्नूजी की अवधारणाएँ :

साहित्य के प्रति मन्नूजी की अपनी मान्यता है - ''लेखन एक अनवरत यात्रा-जिसका न कोई अंत है , न मंजिल। बस निरंतर चलते चले जाना ही जिसकी अनिवार्यता है, शायद नियति भी। ''[१७]

मन्नू भंडारीजी के प्रेमचन्द, शरतचंद्र बचपन से ही प्रिय लेखक रहे । 'आवारा मसीहा' ने उनको ज्यादा झकझोरा है। इस जीवनी को पढ़ने के बाद शरतचंद्र का सारा साहित्य पढ़ डाला। फिर धीरे-धीरे उन्होंने जैनेन्द्र , अज्ञेय, यशपाल, भगवती चरण वर्मा को पढ़ा। मन्नू भंडारी उस समय बी.ए. तृतीय वर्ष में पढ़ती थी खुद 'एक कहानी यह भी' के अंदर लिखती हैं - ''उस समय जैनेन्द्र के छोटे-छोटे सरल सहज वाक्यों वाली शैली ने बहुत आकृष्ट किया था। 'सुनिता' (उपन्यास) बहुत अच्छा लगा था। अज्ञेयजी का उपन्यास 'शेखर : एक जीवनी' पढ़ा जरूर पर उस समय वह मेरी समझ के सीमित दायरे में समा नहीं पाया था। कुछ सालों के बाद 'नदी के द्वीप' पढ़ा तो उसने मन को इस कदर बाँधा कि उसी झोंक में 'शेखर : एक जीवनी' को फिर से पढ़ गई। इस बार कुछ समझ के साथ। यह शायद मूल्यों के मंथन का युग था। ''[१८] शनैः शनैः हिन्दी के सशक्त कहानीकारों की पंक्ति में स्थान पा गयी। उनका लेखन यह प्रमाणित करता है कि लेखक को ईष्या से प्रेरित होकर नहीं बल्कि समस्या से प्रेरित होकर लिखना चाहिए। वह समस्या पर उंगली रख सकता है उसका निदान भी वह कल्पना के माध्यम से दिखला सकता है। पर उसे कलम का अधिकार होने के

नाते किसी भी पात्र के साथ ज्यादती से पेश आने का कोई हक नहीं होता। विश्वसनीयता उसकी पहली शर्त होनी चाहिए।

ध्यान देने लायक बात यह है कि मन्नूजी का समस्त साहित्य कथा साहित्य है। वे विधागत एकाग्रता को अधिक महत्व देती हैं। वह विधागत एकाग्रता पर सोचने- बोलने और विचार करने की अनुभूति देती है। क्योंकि हर युग का साहित्य यह प्रमाणित करता है कि लेखन अपनी रचनाओं के किसी भी विधा को अपना लेता है। अपनी रचना में यदि उन्हें आवश्यकता महसूस हुई तो वे दूसरे के सुझाव को मानकर स्वीकार करती। 'स्त्री-सुबोधिनी' कहानी में नायिका का विवाह राजेन्द्र यादव के सुझाव से ही करवाया गया। इसी प्रकार कमलेश्वर के द्वारा 'तीसरा हिस्सा' कहानी में परिवर्तन किये ।

मन्नूजी का मानना है कि- अपनी इस रचना प्रक्रिया के दौरान कुछ बातें अनायास ही मेरे सामने उजागर होकर उभरीं। अपने भीतरी 'मैं' के अनेक बाहरी 'मै'' के साथ जुडते चले जाने की चाहना में मुझे कुछ हद तक इस प्रश्न का उत्तर भी मिला कि मैं क्यों लिखती हूँ ? किसी भी रचना के छपते ही इस इच्छा का जगना कि अधिक से अधिक लोग इसे पढ़ें , केवल पढ़ें ही नहीं , बल्कि इससे जुड़े भी -संवेदना के सार पर उसके भागीदार बनें यानि कि एक की कथा-व्यथा अनेक की बन सके, बनें। केवल मेरे ही क्यों , अधिकांश लेखकों के लिखने के मूल में एक और अनेक के बीच सेतु बनने की यह कामना निहित रहती ? हालाँकि यह भी जानती हूँ कि यह पाठक-पिपासा आपको आसानी से 'लोकप्रिय साहित्य ', चाहे तो व्यावसायिक भी कह लें : के विवादास्पद मुहाने पर ले जा कर खडा कर सकते है। पाठक वर्ग के बारे में उनका मानना है - ''एक वर्ग है हमारे यहाँ पाठक निरपेक्ष लेखकों का , जिसकी मान्यता है कि पाठकों की सीमित संख्या ही रचना की उत्कृष्टता का पैमाना है ...... हल्की और चलताऊ रचनाओं को ही बड़ा पाठक वर्ग मिलता है। इस दृष्टि से तो प्रेमचन्द की रचनाओं को सबसे पहले खारिज कर देना चाहिए। उनकी लोकप्रियता , दूर-दराज गाँव तक फैला-पसरा उनका व्यापक पाठक वर्ग, हर

पीढ़ी के कथाकारों के एक बड़े समुदाय की उनके साथ जुड़ने की ललक... ये सब किस बात के सूचक है ? मैं नहीं सोचती कि लोकप्रियता कभी भी रचना का मानक बन सकती है । असली मानक तो होता है रचनाकार का दायित्व बोध, उसके सरोकार , उसकी जीवन-दृष्टि और उसकी कलात्मक निपुणता।''[१९]

मन्नूजी का यह मानना है - ''पाठक मेरे अपने लिए बहुत अहमियत रखते हैं। वो पाठक कौन हो , कैसा है , कहाँ है, इसका कोई अहसास रचना करते समय मुझे नहीं होता, नहीं यह अदृश्य पाठक मेरे लेखन की दिशा निधारित करता है - बिलकुल नहीं। उसकी भूमिका तो छपने के बाद शुरू होती है। उसने रचना को कैसे ग्रहण किया ...मेरे पात्रो के साथ , उनकी संवेदना के साथ उसकी संवेदना एकमेक हुई या नहीं , जिन स्थितियों और समस्याओं को मैंने उठाया , उन्होंने उसे झकझोरा या नहीं, कुछ सोचने के लिए मजबूर किया या नहीं... इसे ही कसौटी मानती हूँ मैं अपनी रचना की सफलता - सार्थकता की ।''[२०]

मन्नूजी की यह भी धारणा है कि हर व्यक्ति का दुःख और उसकी समस्याएँ निजी होती हैं। ठीक उसी प्रकार रचनाकार भी अपनी रचना प्रक्रिया के दौरान बिलकुल अकेला होता है और अपने अकेलेपन की अनुभूतियों को ही वह रचना के माध्यम से दूसरों तक पहुँचना चाहता है। यह दूसरे तक पहुँचने की प्रक्रिया (त्रासदी अथवा कामदी) ही रचनाकार को संतोष प्रदान करती है। मन्नूजी स्वीकार भी करती हैं कि : लेखन ने मुझे अपनी निहायत निजी समस्याओं के प्रति 'ओब्जेक्टिव' होना सिखाया है।

निष्कर्ष :

समग्र अध्याय के विहंगावलोकन से हम निम्नलिखित निष्कर्षों तक सहजतया पहुँच सकते हैं -

१.कथा साहित्य हिन्दी के आधुनिक युग की पहचान सा बन गया है। बींसवी शताब्दी का समग्र चिंतन हमें उपन्यासों और कहानियों द्वारा प्राप्त होता है।

२.उपन्यास एक यथार्थधर्मी विधा है। उसमें वास्तविक जीवन का प्रतिनिधित्व

M. S. Univ. ... Mehta Library (stamp)

करनेवाली घटनाओं और पात्रों का चित्रण होता है।

३. जहाँ उपन्यास जीवन की समग्रता को लेकर चलता है वहाँ कहानी जीवन की कुछ मार्मिक घटनाओं को स्पर्श करती है।

४. हिन्दी उपन्यास को गौरव पूर्ण स्थिति में ले जाने का कार्य मुन्शी प्रेमचंद ने किया है। अत: उपन्यासिक विकास को आलेखित करते समय पूर्व प्रेमचन्दकाल, तथा प्रेमचन्दोत्तरकाल जैसे विभाग करने पड़ते है।

५. पूर्व प्रेमचन्द काल के लेखको में लाला श्री निवासदास, पंडित श्रद्धाराम, बालकृष्ण भट्ट, किशोरीलाल गोस्वामी, देवकी नंदन खत्री, बाबू गोपाल राम गहमरी आदि उल्लेखनीय है।

६. प्रेमचन्द युग के लेखको में समस्या मूलक उपन्यासों की प्रवृत्ति मिलती है। इस युग के लेखको में प्रेमचन्द, विश्वभर नाथ शर्मा 'कौशिक', ऋषभचरण जैन, प्रताप नारायण श्रीवास्तव, राजा राधिकारमण प्रसाद सिह, सूर्यकान्त त्रिपाठी, 'निराला' आचार्य चतुरसेन शास्त्री, वृन्दावनलाल वर्मा, भगवती प्रसाद वाजपेयी, गोविन्द वल्लभ पंत, उषा देवी मित्रा, तेजोरानी दिक्षित आदि की गणना कर सकते है। प्रेमचन्द युग के अंतिम चरण में जैनेन्द्र, भगवती चरण वर्मा, तथा इलाचन्द्र जोशी आदि आते हैं।

७. प्रेमचन्दोत्तर लेखको में यशपाल, अमृतलाल नागर, हिमांशु श्री वास्तव, राजेन्द्र यादव, कमलेश्वर डॉ. रामदरथ मिश्र, डॉ. शिवप्रसाद सिंह, मन्नूभंडारी, कृष्णा सोबती, निर्मल वर्मा, अज्ञेय आदि लेखक आते हैं। हमारी आलोच्य लेखिका मन्नूभंडारी की गणना भी स्वातंत्र्योत्तर उपन्यासकारों में होती है।

८.हिन्दी कहानी का इतिहास लगभग सौ वर्षों का है। प्रथम हिन्दी कहानी के सन्दर्भ में विद्वानों में मतभेद है। हिन्दी के प्रारंभिक कहानीकारों में विश्वंभरनाथ शर्मा 'कौशिक', सुदर्शन, जयशंकर प्रसाद, प्रेमचंद, चन्द्रधर शर्मा गुलेरीजी आदि आते हैं। प्रेमचन्दोत्तर कहानीकारों में जैनेन्द्र कुमार, भगवती चरण वर्मा, यशपाल राजेन्द्र यादव, कमलेश्वर भीष्म साहनी, निर्मल वर्मा, मन्नू भंडारी, अमरकांत मार्कडेय, उषा प्रियवंदा आदि आते हैं।

९. स्वातंत्र्योत्तर कहानी में हमें मानव जीवन की विसंगतियाँ और विद्रूपता का चित्रण मिलता है।

१०. आधुनिक कथाकरों में एक सशक्त हस्ताक्षर के रूप में मन्नू भंडारी उभर कर आयी है। उनके ऊपर बंगला साहित्य का काफी प्रभाव है। उनका साहित्य परिणाम नहीं किन्तु गुणवत्ता की दृष्टि से श्रेष्ठ कहा जा सकता है।

*

संदर्भ :

१. राजेश्वर - काव्य मीमांसा, अध्याय-२, पृ. २१

२. सुमन - साहित्य विवेचन, पृ.१५०

३. सुमन - वही, पृ. ३

४. सुमन - वही, पृ. ३

५. हिन्दी अभ्यास समिति -कथा द्वादशी, पृ. ६

६. - वही, पृ.६

७. डॉ. नन्ददुलारे वाजपेयी-आधुनिक साहित्य, पृ. १२५

८. डॉ. सीयाराम शरणप्रसाद -हिन्दी उपन्यास का विकास और उसके प्रतिनिधि, पृ.२६

९. महेन्द्र चतुर्वेदी -हिन्दी उपन्यास. एक सर्वेक्षण, पृ. १२२

१०. डॉ. वेद प्रकाश अमिताभ-हिन्दी कहानी के सौ वर्ष, पृ. ९

११. -वही, पृ. ४४

१२. -वही, पृ. ५२

१३. मधुरेश - आज की हिन्दी कहानी : विचार और प्रतिक्रिया, पृ. ४३

१४. सं.सच्चिदानंद वात्सायन-साहित्य और समाज परिवर्तन की प्रक्रिया, पृ.७९

१५. - वही, पृ. ८८

१६. अनीता राजुरकर -कथाकार मन्नूभंडारी, पृ. १४

१७. समकालीन भारतीय साहित्य -पत्रिका- मई -जून-१९९७, पृ. ७
'एक कहानी यह भी'

१८. - वही , पृ. १२

१९. - वही, पृ. २०

२०. - वही, पृ. २१